National Journal of
Hindi & Sanskrit Research

ISSN: 2454-9177
NJHSR 2025; 1(61): 96-99
© 2025 NJHSR
www.sanskritarticle.com

प्रशांत जैन
शोधार्थी, जैनदर्शन विभाग,
श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत-विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

Correspondence:
प्रशांत जैन
शोधार्थी, जैनदर्शन विभाग,
श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत-विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

आगम के विविध लक्षणों का समन्वय

प्रशांत जैन

भूमिका -

जैन शास्त्रों में आगम लक्षण विषयक तीन प्रकार के कथन मुख्यता देखने को मिलते हैं। प्रथम तो सर्व विदित रत्नकरण श्रावकाचार में आचार्य समंतभद्र द्वारा कथित आप्त के वचन आगम होते है, द्वितीय न्यायजगत में प्राप्त लक्षण कथन जिसमें कहा जाता है कि आप्त के द्वारा निर्दिष्ट शब्द से होने वाला वस्तु का ज्ञान आगम हैं। तीसरे स्थान पर जैन अध्यात्म का कथन आता है, जिसके अनुसार अपनी आत्मा का ज्ञान ही सर्व श्रुत का ज्ञान है। इन तीनों लक्षणों को ऊपर से देखने पर तीनों में विभिन्नता देखने में आती है। उक्त तीनों ही लक्षण तीन अलग-अलग दिशा में इशारे करते है। क्या जैन आगम में इतने छोटे से आगम के लक्षण को ही लेकर इतनी विभिन्नता है? इसप्रकार से तो आगम के वास्तविक स्वरूप का निर्णय किस प्रकार संभव होगा ?

अनुयोगों की शैली भेद होने से उपर्युक्त लक्षणों में भेद परिलक्षित होता है, परंतु वास्तविकता में वस्तु स्वरूप के निकट जाकर देखने पर भेद मालूम ही नहीं होता। शैली का भेद है, कथन का भेद नहीं है। प्रत्येक अनुयोग अपने प्रयोजन अनुसार शैली अंगीकार करता है, एवं उसकी कथन पद्धति भी उस प्रयोजनानुकूल ही होती है। उपर्युक्त लक्षण में भी विभिन्नता का आधार प्रयोजनानुकूल शैली भेद ही है। तीनों कथन एक दूसरे के पूरक भी है, तथा क्रमिक विकास भी लिये हुए है। इनकी विशेष व्याख्या करने से पूर्व एक बार तीनों लक्षणों को मूल स्वरूप देख ले।

आगम के विभिन्न लक्षण -

1) आचार्य समंतभद्र द्वारा कथित लक्षण -

आप्तोपज्ञमनुल्लङ्घ्यमदृष्टेविरोधकम्।
तत्त्वोपदेशकृत्सार्व शास्त्रं कापथघट्टनम् ॥9॥[1]

अर्थात जो आप्त कहा हुआ है, वादी प्रतिवादी द्वारा खंडन करने में न आवे, प्रत्यक्ष अनुमानादि प्रमाणों से विरोध रहित हो, वस्तु स्वरूप का उपदेश करने वाला हो, सब जीवों का हित करने वाला और मिथ्यामार्ग का खंडन करने वाला हो, वह सत्यार्थ शास्त्र है।

2) परीक्षामुख (न्यायशास्त्र) में प्राप्त लक्षण -

आप्तवचनादिनिबंधनमर्थज्ञानमागमः।[2]

अर्थात आप्त के वचनादि से होने वाले पदार्थों के ज्ञान को आगम कहते हैं।

3) अध्यात्म उद्भावक आचार्य कुन्दकुन्द द्वारा कथित आध्यात्मिक एवं प्रायोगिक लक्षण -

जो हि सुदेणहिगच्छदि अप्पाणमिणं तु केवलं सुद्धं।
तं सुदकेवलिमिसिणो भणन्ति लोयप्पदीवयरा।।
जो सुदणाणं सव्वं जाणदि सुदकेवलिं तमाहु जिणा।

णाणं अप्पा सव्वं जम्हा सुदकेवली तम्हा।।[3]

अर्थात जो जीव श्रुतज्ञान (आगम) द्वारा केवल एक शुद्ध आत्मा को जानते है, उसे लोक के ज्ञायक ऋषिगण निश्चय से श्रुतकेवली (आगम ज्ञाता) कहते है और जो सर्व श्रुत ज्ञान (आगम) को जानते है, उन्हें जिनदेव व्यवहार श्रुतकेवली (आगम ज्ञाता) कहते है; क्योंकि सर्व ज्ञान आत्मा ही तो है।

उपर्युक्त तीनों लक्षणों में विभिन्नता -

प्रथम लक्षण आचार्य समंतभद्र द्वारा चरणानुयोग की परिपाटी में कथित है जिसके अनुसार आप्त (सर्वज्ञ, वीतरागी और हितोपदेशी पुरुष विशेष) द्वारा कथित शास्त्र आगम होते है। शेष लक्षण चिन्ह इस प्रमुख लक्षण के पोषक है, जैसे की सर्वज्ञ द्वारा कथित होने से वे वचन मिथ्याशास्त्रों के विध्वंसक एवं पूर्वापर अविरोधी होते है। सर्वज्ञ वचनों में प्रत्यक्ष या परोक्ष किसी भी प्रमाण से बाधा संभव नहीं होती है। हितोपदेशी के वचन होने से हितकारी होते है। इस प्रकार अन्य लक्षण चिन्ह तो प्रमुख आप्त वचन लक्षण के पोषक तत्त्व है। इस लक्षण में आज्ञा की प्रधानता है।

द्वितीय लक्षण आचार्य माणिक्यनंदी द्वारा परीक्षामुख सूत्र के तृतीय अध्याय में कहा गया है। परीक्षामुख जैन दर्शन में न्यायशास्त्र के अंतर्गत आने वाला शास्त्र है। न्यायशास्त्रों में परीक्षा की प्रधानता होती है, इसीलिए इसमें कहा गया कि मात्र आप्त वचन आगम नहीं है। आप्त वचनों के माध्यम से होने वाला वस्तु ज्ञान आगम है। आप्त वचन तो वचन है, और आगम एक प्रमाण ज्ञान का भेद है। अतः किसी अन्य व्यक्ति के वचन मात्र बिना वस्तु ज्ञान के प्रामाणिक ज्ञान के अन्तर्गत कैसे आ सकते है। इसीलिए आप्त के वचन का निमित्त पाकर होने वाला वस्तु ज्ञान आगम प्रमाण है, न की मात्र आप्त वचन। इस लक्षण में परीक्षा की प्रधानता है।

तृतीय लक्षण अध्यात्म जगत के नायक आचार्य कुन्दकुन्द देव की कलम से प्राप्त होता है। आगम अपर-नाम श्रुत ज्ञान को परिभाषित करते हुए आचार्य देव ग्रंथाधिराज समयसार में लिखते है कि व्यवहार नय का यह कथन है कि केवली (सर्वज्ञ) द्वारा कथित वाणी का ज्ञान सर्व श्रुत का ज्ञान है, निश्चय नय से तो जो अपनी आत्मा को जानता है, वह संपूर्ण श्रुत को जानता है। इस लक्षण की सिद्धि में वे कहते है कि सर्व श्रुत आत्मा ही है, इसीलिए आत्मा को जानना ही सर्व श्रुत को जानना है। यह लक्षण अध्यात्म शैली की प्रमुखता से कहा गया है।

इसप्रकार आज्ञा प्रधानता, परीक्षा प्रधानता एवं अध्यात्म प्रधानता से तीन लक्षणों में भेद लक्षित होता है।

उपर्युक्त तीनों लक्षणों में समन्वय -

उपर्युक्त तीनों लक्षणों में आज्ञा प्रधानता, परीक्षा प्रधानता एवं अध्यात्म प्रधानता से दिखने वाला भेद वास्तविकता में भेद न होकर एक - दूसरे के पूरक कथन है। प्रथम लक्षण नव प्रविष्ट शिष्यों की मुख्यता से लिखा गया है। नवीन शिष्यों को शिक्षा प्रदान आज्ञा प्रधानता से ही दी जाती है। नर्सरी कक्षा में अध्ययन करने वाले छात्र-छात्राओं को अक्षर ज्ञान एवं अंक ज्ञान आज्ञा प्रधानता की परिपाटी का ही अनुसरण करते हुए दिया जाता है। प्रथम लक्षण चरणानुयोग की कथनपद्धति पर आधारित कथन है। चरणानुयोग में आचरण की प्रधानता होती है, और आचरण आज्ञा पर निर्भर करता है, इसीलिए इस कथन की पद्धति में मात्र आप्त वचनों का उल्लेख है, परंतु यदि गहराई से विचार करे तो क्या कोई भी आप्त वचनों का ज्ञान, पाठक की ज्ञान परिणति के विकास के बिना संभव है? यदि हम किसी भी कथा को पढ़ते है तो एक दृश्य हमारे समक्ष स्वतः निर्मित होने लगता है। कहने में मात्र "कथा को पढ़ो" ऐसा ही आता है परंतु उसका प्रयोजन उसे पढ़कर उसका सार समझो, यह ही होता है। इसीप्रकार कहने में या आज्ञा में आप्त वचनों को आगम समझो आता है, परंतु उसका अर्थ तो उसे पढ़कर सम्यक् समझ प्राप्त करना ही होता है।

न्यायशास्त्र अपनी परीक्षा प्रधानता की शैली के कारण एक कदम आगे बढ़ गए और इस ही बात को पोषित करते है कि आप्त वचन का ज्ञान का अर्थ, मात्र पर पुरुष के वचन का ज्ञान ही नहीं अपितु उससे होने वाला वस्तु ज्ञान है । इसीलिए वे इस बात को उजागर करते है कि कथा का ज्ञान, कथा को पढ़ना मात्र नहीं है, उस कथा को पढ़कर जो पाठक के चित्त में समझ पैदा हुई है वह समझ कथा का ज्ञान होता है। इसी प्रकार आगम ज्ञान मात्र आप्त वचनों का ज्ञान नहीं है, उन वचनों के माध्यम से होने वाला स्वयं के चित्त में जो ज्ञान है वह आगम ज्ञान है। कथन दोनों ही जगह समान है, बस अंतर कथन पद्धति का है। चरणानुयोग की कथन पद्धति प्राथमिक भूमिका में निवास करने वाले शिष्य की मुख्यता पर आधारित है, जबकि न्यायशास्त्र की शैली माध्यमिक कक्षा के छात्रो की शिक्षा पद्धति का अनुसरण करती है। माध्यमिक शिक्षा प्राथमिक शिक्षा की पोषक होती है विरोधक नहीं।

आचार्य कुन्दकुन्द देव द्वारा प्रदत्त लक्षण उच्च शिक्षा के छात्रों की शिक्षण परिपाटी का अनुसरण करते है। अध्यात्म इस जीवन का अंतिम एवं वास्तविक सत्य है। अध्यात्म का प्रयोजन सर्व भेद विकल्प को शून्य कर, मूल प्रयोजन परक ज्ञान में आरूढ़ कराना होता है। ख़ुद से ख़ुद के मिलन का नाम अध्यात्म होता है। सर्व शास्त्रों के ज्ञान में यदि कोई मनुष्य अपना सम्पूर्ण आयु का व्यय करता है तो, उस समय का मूल्य ज्ञान अर्चन मात्र नहीं होता, अर्जित ज्ञान का उपयोग भी आवश्यक है। शिक्षा मात्र किताबें रटना नहीं होती, रटी हुई किताबों को जीवन में प्रयोग करना शिक्षा होती है। यदि हम अपने पूर्व उदाहरण को विकसित करे तो "कथा पढ़ो" ये प्राथमिक शिक्षा, "कथा पढ़कर उसे समझो" ये माध्यमिक शिक्षा और "कथा पढ़कर जो समझा

वैसा आचरण करो" (ग़लत को छोड़ो और सही को अंगीकार करो) ये उच्च शिक्षा हुई। किसी भी चीज को समझना मात्र शिक्षा का प्रयोजन नहीं है, उस अर्जित शिक्षा को जीवन उपयोगी रूप से क्रियान्वित करना शिक्षा का प्रयोजन है। शिक्षा का उचित क्रियान्वयन ही उच्च शिक्षा का उद्देश्य है। आचार्य कुन्दकुन्द देव उच्च शिक्षा के ही प्राध्यापक है।

आप्त पुरुष के वचन से होने वाले वस्तु ज्ञान का प्रयोजन मात्र तत्त्वार्थ का निर्णय करना नहीं अपितु निर्णीत अर्थ में प्रवृति करना भी है, यह ही ज्ञान का परिणाम है। यदि बिना परिणाम के ज्ञान हो तो वह सम्यक्ज्ञान नहीं हो सकता है। किसी भी वस्तु का ज्ञान परिणाम के साथ ही होता है, बिना परिणाम के होने वाला ज्ञान, ज्ञान नहीं होता है। जहर के ज्ञान का अर्थ जहर का त्याग करना होता है, यदि कोई कहे कि मुझे जहर का ज्ञान है और उसका सेवन करता रहे तो क्या वह ज्ञान सम्यक्ज्ञान होगा? ज्ञान के सम्यक् होने के लिए परिणाम का होना अनिवार्य है। इसीलिए आचार्य कुन्दकुन्द देव अध्यात्म शैली का अनुसरण करते हुए प्रयोजनपरक कथन करते है। आप्त वचनों के ज्ञान का परिणाम आप्त वचनों में प्रवृत्ति है जो की आत्मोपलब्धि स्वरूप है। इसीलिए आचार्य कुन्दकुन्द देव आत्मा ज्ञान को ही सर्व श्रुत का ज्ञान बताते है।

द्रव्य-भाव निक्षेप : समन्वय का सूत्र

आप्त वचनों द्वारा अर्थज्ञान और आत्मज्ञान के मध्य द्रव्य एवं भाव निक्षेप की परिपाटी से समन्वय स्थापित किया जा सकता है। द्रव्य निक्षेप के आगम द्रव्य निक्षेप एवं नो-आगम द्रव्य निक्षेप से दो भेद होते हैं। सर्वार्थसिद्धिकार आचार्य पूज्यपाद आगम द्रव्य निक्षेप को परिभाषित करते हुए लिखते है कि -

जीवप्राभृतज्ञायी मनुष्यजीवप्राभृतज्ञायी वा अनुपयुक्त आत्मा आगमद्रव्यजीव:।[4]

अर्थात जो जीवविषयक या मनुष्य जीव विषयक शास्त्र को जानता है, किंतु वर्तमान में उसके उपयोग से रहित है वह आगम द्रव्यजीव है। इसी प्रकार भाव निक्षेप के भी आगम भाव निक्षेप और नो-आगम भाव निक्षेप के भेद से दो भेद है। जिसमें आगम भाव निक्षेप को परिभाषित करते हुए सर्वार्थसिद्धिकार आचार्य पूज्यपाद लिखते है कि -

तत्र जीवप्राभृतविषयोपयोगविष्टो मनुष्यजीवप्राभृतविषयोपयोगयुक्तो वा आत्मा आगमभावजीव:।[5]

अर्थात जो आत्मा जीव विषयक शास्त्र को जानता है और उसके उपयोग से युक्त है वह आगम-भाव-जीव कहलाता है।

दोनों परिभाषा को गंभीरता से देखे तो, इन दोनों में उपयुक्त और अनुपयुक्त का भेद दिखायी देता है। जो व्यक्ति शास्त्र ज्ञान से सहित है, परंतु वर्तमान में उसका उपयोग शास्त्र चिंतन या प्रवृत्ति से रहित है, अर्थात अनुपयुक्त है वह आगम द्रव्य निक्षेप है और जिसका उपयोग शास्त्र ज्ञान से युक्त है अर्थात वर्तमान में शास्त्र चिंतन या प्रवृत्ति से युक्त है तो वह भाव आगम निक्षेप है।

द्रव्यागम निक्षेप से आप्त द्वारा उपदिष्ट वाणी के माध्यम से होने वाला वस्तु ज्ञान युक्त पाठक आगम कहलाता है। परंतु भाव निक्षेप की मर्यादा में प्रवृत्ति का होना जरूरी है। आप्त वचनों में पाठक की प्रवृत्ति अर्थात आप्तोपदिष्ट अर्थ को समझकर अंगीकार करना, उस रूप चिंतन करना, प्रवृत्ति करना भावनिक्षेप है। आचार्य समंतभद्र और न्यायशास्त्र द्रव्यनिक्षेप सापेक्ष आगम अर्थ प्रस्तुत करते है, जबकि आचार्य कुन्दकुन्द भावनिक्षेप सापेक्ष होकर आगम लक्षण कहते हैं । दोनों ही मत सही है और ना ही इनमें कोई प्रत्यक्ष या परोक्ष प्रमाण से विरोध है। मात्र अपेक्षा भेद है। जब तक शास्त्र ज्ञान बौद्धिक ज्ञान है तब तक वह द्रव्य निक्षेप से शास्त्र ज्ञान है और जब वो ही बौद्धिक ज्ञान आचरण में, प्रवृत्ति में लक्षित होने लगे तब वह शास्त्र ज्ञान भाव निक्षेप से शास्त्र ज्ञान है। ज्ञान का होना अलग कथन है और अर्जित ज्ञान का प्रयोग करना अलग कथन है परंतु ये विरुद्ध कथन नहीं अपितु एक दूसरे के पूरक कथन है। अतः उपर्युक्त कथनों में कोई भेद नहीं है अपितु ये परस्पर पूरक है और क्रमिकता लिए हुए है।

तीनों लक्षणों में क्रमिकता -

उपर्युक्त तीनों लक्षण एक ही तत्त्व के तीन विभिन्न अपेक्षा से कथन मात्र ही नहीं अपितु एक अध्ययन की या विकास की क्रमिकता भी दिखाते हैं। जो व्यक्ति शास्त्र ज्ञान रहित है, विषय-कषाय लवलीन है उसको शास्त्र ज्ञान की प्राथमिक शिक्षा की आवश्यकता होती है, वह सीधा तत्त्वचिंतन या परीक्षण नहीं कर सकता, उसके लिए तो मात्र आप्त वचन ही प्रामाणिक है इतना कहा जाएगा परंतु जब वह थोड़ा पढ़ने सुनने लगे तब उसे कहा जाएगा कि इसका परीक्षण करो। उसको माध्यमिक शिक्षा की श्रेणी में लाया जाएगा। जो पढ़ा सुना है उसको समझो, उससे प्रतिभासित होने वाला अर्थ समझो और जब वह माध्यमिक श्रेणी भी उत्तीर्ण कर ले तब वह उच्च शिक्षा का अधिकारी होता है । इस भूमिका में आकर उसको चिंतन करने, प्रवृति करने, अर्जित शिक्षा का आचरण करने का उपदेश दिया जाएगा। उच्च शिक्षा की अवस्था में आने के बाद यदि कोई व्यक्ति अपनी शिक्षा को जीवन उपयोगी बना कर उसका प्रयोग नहीं कर पाता है तो वह शिक्षित नहीं अशिक्षित ही कहलाएगा। यदि कोई अभियंता (engineer) की शिक्षा अर्जित करने के बाद सड़क के निर्माण में असमर्थता प्रदर्शित करे तो क्या वह शिक्षित अभियंता कहलाएगा या बस नाम धारी अभियंता कहलाएगा ? ये ही अवस्था आगम के संदर्भ में भी है।

निष्कर्ष -

निष्कर्ष रूप में निम्न बिंदु कहे जा सकते है -

1. आज्ञा प्रधानता, परीक्षा प्रधानता और अध्यात्म या प्रयोग प्रधानता से कथित आगम के तीन विभिन्न लक्षणों में मात्र अपेक्षा भेद है परंतु वास्तविकता में उनमें कोई भिन्नता नहीं है।
2. यें तीनों लक्षण शिक्षा के तीन स्तर हैं । प्राथमिक शिक्षा के लिए आज्ञा प्रधानता, माध्यमिक शिक्षा के लिए परीक्षा प्रधानता और उच्च शिक्षा के लिए प्रयोग प्रधानता । इस प्रकार इन तीनों में समन्वय स्थापित होता है। ये एक दूसरे के विरोधी नहीं अपितु पूरक ही हैं।
3. द्रव्य और भाव निक्षेप की अपेक्षा से भी इनमें समन्वय स्थापित किया जा सकता है।
4. विषय कषाय में लीन पुरुष प्राथमिक शिक्षा का ही छात्र है, उसके लिए आज्ञा प्रधानता ही शिक्षित होने का मार्ग है। शास्त्र को पढ़ने सुनने वाले जीव माध्यमिक शिक्षा के छात्र है, उनके लिये अब पढ़े सुने शास्त्रों को समझना ही शिक्षित होने का मार्ग है। और शास्त्र के ज्ञाता पुरुष उच्च शिक्षा के छात्र है, उनके लिए अर्जित ज्ञान को प्रयोग करना ही शिक्षित होने का मार्ग है। इस प्रकार इन तीनों लक्षणों में क्रमिकता भी है।

अतः आगम में कथित आगम के विभिन्न लक्षणों में परस्पर भेद नहीं है, अपितु वे एक-दूसरे के पूरक कथन है।

सन्दर्भ ग्रन्थः

[1] रत्नकरंडश्रावकाचार श्लोक 9

[2] परीक्षामुख सूत्र, ३/९९

[3] समयसार गाथा ९-१०

[4] सर्वार्थसिद्धि/1/5/18/2

[5] सर्वार्थसिद्धि/1/5/18/8